© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS | Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 03 , Issue : 09 | October – December 2017

लोकप्रिय हिंदी सिनेमा में दलित चित्रण

मनोज कुमार, पीएच.डी शोधार्थी. पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग, महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय रोहतक।

सार संक्षेप : हिंदी फिल्मों के पितामह दादा साहब फाल्के ने जब पहली फिल्म बनाई थी तब उन्होंने पौराणिक कथानकों को उठाया था। आरंभिक फिल्में कही न कही पारसी के लोकप्रिय थियेटर की ही जगह ले रहे थे। पारसी थियेटर के नाटक अधिक रूप में उस मेलाड्रामा का ही एक मंचीय रूप था जिसे हम वर्तमान के लोकप्रिय सिनेमा से जोडते है। इसके साथ यह भी सही है कि इन मनोंरजन फिल्मों के निर्माण में कुछ उद्देश्य को ध्यान में रखा जाने लगा था हमें यही पूरे इतिहास को जानने की आवश्यकता नहीं है लेकिन आरंभ से वर्तमान तक इन्ही मेलोड्रामाई फिल्म विधा में लगातार ऐसी फिल्में बनती रही जिनमें नए प्रयोग भी होते रहे और जिनमें किसी न किसी सामाजिक समस्या को अधिक गंभीरता से उठाया जाता रहा। दलित वर्ग का अर्थ अस्पृश्य ही नहीं अपितु सामाजिक रूप से अविकसित, पीड़ित, शोषित, निम्न, जातियों के वर्गों की गणना भी दलित में होती है। प्रस्तुत पेपर में शोधार्थी ने लोकप्रिय हिंदी सिनेमा में दलित चित्रण को विभिन्न रूपों में दिखाया गया है।

मुख्य शब्द : सिनेमा, लोकप्रिय, दलित, दर्शक, व्यवसाय, कलाकार, कहानी, शोषण, स्वरूप

लोकप्रिय हिंदी सिनेमा से अभिप्राय

लोक' शब्द की प्राचीनता : लोक 'शब्द' संस्कृत के 'लोक दर्शन' धातु से 'घ प्रत्यय करने पर निशपन्न हुआ है। इस धातु का अर्थ 'देखना' होता है, जिसका लट् लकार में अन्य पुरूष एक वचन का रूप 'लोकते' है। अतः लोक 'शब्द' का अर्थ हुआ 'देखने वाला'। अत वह समस्त जन–समुदाय जो इस कार्य को करता है 'लोक' कहलाएगा। लोक शब्द अत्यत प्राचीन है। साधारण जनता के अर्थ में इसका प्रयोग 'ऋग्वेद' में अनेक स्थानों पर किया गया है। ऋग्वेद में लोक शब्द के लिए 'जन' का भी प्रयोग उपलब्ध है। ऋग्वेद के पुरूष सूक्त में लोक शब्द का व्यवहार 'जीव' तथा 'स्थान' दोनों अर्थों में किया गया है। उपनिषदों में अनेक स्थानों पर लोक' शब्द व्यवहार में लाया गया है। दादा साहब फाल्के ने जब पहली फिल्म बनाई थी तब उन्होंने पौराणिक कथानकों को उठाया था। आरंभिक फिल्में कही न कही पारसी के लोकप्रिय थियेटर की ही जगह ले रहे थे। पारसी थियेटर के नाटक अधिक रूप में उस मेलाड्रामा का ही एक मंचीय रूप था जिसे हम वर्तमान के लोकप्रिय सिनेमा से जोडते है। इसके साथ यह भी सही है कि इन मनोंरजन फिल्मों के निर्माण में कुछ उद्देश्य को ध्यान में रखा जाने लगा था हमें यही पूरे इतिहास को जानने की आवश्यकता नहीं है लेकिन आरंभ से वर्तमान तक इन्ही मेलोड्रामाई फिल्म विधा में लगातार ऐसी फिल्में बनती रही जिनमें नए प्रयोग भी होते रहे और जिनमें किसी न किसी सामाजिक समस्या को अधिक गंभीरता से उठाया जाता रहा। इसी दौर में अगर हम बात करे महबूब की फिल्म 'मदर इंडिया' की जो पूरी गंभीरता से गांव में महाजनी शोषण पर आधारित थी। फिल्म के फिल्मांकन ने इस तरह के गंभीर मसले को उठाते हुए लोकप्रिय सिनेमा के उन सभी नुस्खों का बखूबी इस्तेमाल करती नजर आई जो बाद में अन्य फिल्मों के निर्माण में भी दर्शकों को देखने को मिला। 1943 में बनी फिल्म 'किस्मत' अपने समय की सर्वाधिक लोकप्रिय फिल्म थी। इस फिल्म में खोए हुए बेटे की कहानी को पहली बार कथा का आधार बनाया था और यह फार्मूला आज भी लोकप्रिय है। लेकिन अगर हम देखे तो फिल्म 'किस्मत' आज उतनी लोकप्रिय नहीं है जितने की अपने जमाने में थी। ऐसी काफी फिल्में है जो अपने समय में लोकप्रिय हुई और उन्होंने अच्छा व्यवसाय किया लेकिन बाद के दौर में उन्हें वक्त के साथ दर्शकों ने भूला दिया गया। लेकिन कुछ ऐसी लोकप्रिय फिल्में भी है, जो अपने समय में भी लोकप्रिय हुई ओर आज भी लोग उन्हें देखना पंसद करते है। मसलन 'मुगले आजम', 'मदर इंडिया, ' 'शोले' जैसी फिल्मों का नाम लिया जा सकता है। यह ऐसी फिल्में है जिन्हें प्रदर्शन के समय उतनी कामयाबी नहीं मिली लेकिन बाद में ये लगातार देखी जाती रही ओर उन्हें अच्छी फिल्म के तौर पर लोकप्रिय फिल्में कही जाती रही है। इस संक्षिप्त विचार के बाद हम यह निष्कर्ष निकाल सकते है कि फिल्म का लोकप्रिय होना उसकी सफलता या असफलता पर निर्भर नहीं करता। लोकप्रिय फिल्म तो वह होती है जो समाज के सभी वर्गों के लिए बनाई गई हो। इस तरह की बनी फिल्में मनोंरजन से भरपूर होती है इसके साथ यह किसी पारिवारिक समस्या पर आधारित होती है जो लोक के लिए होती है। दूसरे हम अगर कुछ लोकप्रिय फिल्में नहीं देखते तो ये कहते है कि उन लोकप्रिय हो चुकी फिल्मों के आगे से लोकप्रिय शब्द नहीं हटा सकते है। लोकप्रिय होना सब के साथ भी है और समय के बाद भी चलता रहता है।

लोकप्रिय संस्कृति : लोकप्रिय संस्कृति उन वस्तुओं, कार्यों और विशवास की ओर संकेत करती है जो एक बड़ी जनसंख्या से संगंठित हुए हैं और उनके द्वारा प्रयोग में लाए जा रहे हैं या अपनाये जा रह है। हम लोकप्रिय संस्कृति में हमारे द्वारा खाया जाने वाला खाना, पहने जाने वाले कपड़े, हमारे द्वारा बिताया गया वक्त का तरीका जैसे आपस में की जाने वाली चुगली, एक–स्थान से दूसरे स्थान पर जाने का तरीका या अन्य सब शामिल करते है जो एक समुदाय द्वारा किया जाता है। बशर्ते की ये सब लोकजन में व्याप्त हो अथवा उनके द्वारा किया गया हो। इस तरह साफ है कि लोकप्रिय संस्कृति में प्रतिदिन प्रयोग की जाने वाली वस्तुएं, किए वाले कार्य व कार्यक्रम और बहुत कुछ दैनिक जीवन का हिस्सा है सब इसके तत्व है। लोकप्रिय संस्कृति के ये तत्व उस वक्त ही इसका हिस्सा बन पाते हैं जब लोग इसमें एक से अधिक रूचि रखना या करना आरंभ शुरू करते है और दैनिक संस्कृति में इसे अपना लेते है। जब लोग इन औद्योगिक संस्कृति उत्पादों को दैनिक जीवन में उपभोग कर इन दोनों में अर्न्तसंबंध स्थापित कर देते है, उस वक्त इन

तत्वों द्वारा लोकप्रिय संस्कृति का निर्माण हो सकता है। इससे अर्थ निकलता है कि लोकप्रिय संस्कृति के तत्वों का जन्म लोगों द्वारा उनकी जरूरी जरूरतों, जो दैनिक जीवन की है, को पूरा करने हेतु ही पैदा करवाया जाता हैं तथा इसकी उत्पादकता लोगों के उपयोग पर टिकी है। लोगों द्वारा विभिन्न वस्तुओं का उपभोग ही उत्पाद के जन्म का आधार है तथा जितना ज्यादा यह उपभोग में लाया जाएगा उतना ही लोकप्रिय संस्कृति का हिस्सा बनेगा। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति विशेष चाहे वह किसी भी देश–प्रदेश का क्यों न हो वह केवल अपनी संस्कृति के अनुसार ही अपना और अपने परिवार का पालन–पोषण करता है और अपनी आने वाली पीढ़ियां भी उसी अनुसार चले उनको भी प्रेरित करने के लिए कोई न कोई माध्यम को अपनाता है। माध्यम अगर है तो संस्कृति को अपने दैनिक कार्यो के अनुसार अपने में ढालना है उसी से भविष्य का रास्ता भी तय होता है।

दलित शब्द का अर्थ और अभिप्राय

दलित का शाब्दिक अर्थ 'दबाया' या 'कुचला हुआ' है। दलित शब्द को परिभाषित करते हुए कुछ विद्वानों ने इसे एक वर्गीय शब्द बताया है, जिनकी आर्थिक स्थिति खराब हो और जो विभिन्न प्रकार के अभावों में जीता है, उसे सम्मिलित किया है। किंतु वास्तव में 'दलित' से अभिप्राय उस व्यक्ति से या समुदाय से है जो धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक व राजनैतिक अर्थात सभी क्षेत्रों में उपेक्षित और दबा हुआ या फिर उसको दबाने की कोशिश की जाती रही है। केशव मेश्राम के अनुसार,'' हजारों वर्षों से जिन लोगों पर अन्याय हुआ ऐसे अछूतों को 'दलित' कहना चाहिए'' दलित शब्द के संबंध में आदि काल से नवजागरण काल तक अलग–अलग मनीषियों, विद्वानों एंव इतिहासकारों ने कई प्रकार के शब्दों की व्युत्पति की। आज दलित शब्द समाज के सामने एक नई पृष्ठ भूमि तैयार करता है और बुद्धिजीवी वर्ग को चैतन्य करने के लिए एक नई विश्लेषात्मक, सकारात्मक एवं संकल्पनात्मक, पटाक्षेप की प्रस्तुति करता है कि दलित शब्द क्या है ? कैसा है ? इसकी क्या उपयोगिता है ? एवं वर्तमान समय यह शब्द समाज को किस प्रकार जागरूक करता है ? दलित इतिहास का वर्तमान एवं वास्तविक स्वरूप जानने के लिए भारत की प्राचीन व्यवस्था के इतिहास पर दृष्टिपात करना आवश्यक है यद्यपि अस्पृश्य और दलित जातियां इतिहास के हर दौर में सामाजिक विषमताओं और सामाजिक संस्कृति, कला और धार्मिक समृद्धि में उसके बहुआयामी योगदान की महत्वपूर्ण भूमिका रही। उनके उदय और विकास अघः पतन और जीवन संघर्ष के विशालकाय धर्म शास्त्रों के अतिरिक्त इतिहास में अपूर्ण अथवा अति रंजित जानकारी मिलती है। श्रग्वेद से बौद्धकाल, बौद्धधर्म के पतन से लेकर नवजागरण काल के भारतीय समाज के लगभग 5000 साल के सामाजिक इतिहास में वर्ण व्यवस्था, जाति विभेद, अस्पृष्यता और पतनशील दासता के अनेक लिखित प्रमाण बिखरे पड़े हैं। इरफान हबीब के अनुसार हमारे इतिहास की ऐसी कोई भी व्याख्या विचार योग्य नही हो सकती जिसमें जाति व्यवस्था की भी व्याख्या सम्मिलित न हो। दलित शब्द का संपूर्ण अर्थ जानने के लिए दलित शब्द की व्युत्पति को समझना आवशयक है दलित शब्द की व्युत्पति संस्कृत के 'दल' धातु से हुई है। इस शब्द के विभिन्न शब्द कोशों में विभिन्न अर्थ दिए गए हैं–

1 दल– अग विकसना,फटना, खंडित होना।
2 दल– सक, चूर्ण करना, टुकड़ें करना, विदारना।
3 दल– नृप, सैन्य , लशकर, पत्र पत्ती।

संक्षिप्त में हिंदी शब्द सागर में डॉ. रामचंद्र वर्मा ने दलित शब्द का अर्थ इस प्रकार दिया है–

दलित–विनष्ट किया हुआ।
दलित–विनष्ट स्त्री दलिता।
मसला हुआ, मर्दित, दबाया, रौदा या कुचला हुआ।
खंडित, विनष्ट किया हुआ।

'दलित' शब्द को परिभाषित करते हुए डॉ. कुसुमलता मेघवाल ने लिखा है– दलित का शाब्दिक अर्थ है कुचला हुआ। अतः दलित वर्ग का संदर्भो में अर्थ होगा,वह जाति,समुदाय जो अन्यायपूर्ण सवर्णों या उच्च जातियों द्वारा दमित किया गया हो, रौंदा गया हो। दलित शब्द व्यापक रूप में पीड़ित के अर्थ में प्रयुक्त होता है, परंतु 'दलित वर्ग' का प्रयोग हिंदू समाज–व्यवस्था के अंतर्गत, परंपरागत रूप में शूद्र माने जाने वाले वर्णों के लिए रूढ़ हो गया है। दलित वर्ग का अर्थ अस्पृश्य ही नहीं अपितु सामाजिक रूप से अविकसित, पीड़ित, शोषित, निम्न, जातियों के वर्गों की गणना भी दलित में होती है। मुरूगकर का मानना है कि सर्वाधिक 1970 के दशक में दलित पैंथर्स नामक दलितों के एक राजनीतिक दल द्वारा दलित शब्द का प्रयोग प्रारंभ किया गया। दलित पैंथर्स द्वारा दलित शब्द की परिभाषा में समाज के अनुसूचित जाति जनजाति, नवबौद्ध, मजदूर, भूमिहीन एवं गरीब किसान, उच्चवर्ग वर्ण के आर्थिक एवं धार्मिक रूप से पीड़ित एंव शोषित सदस्यों को शामिल किया गया था। समाजशास्त्री नन्दूराम दलित पैंथर्स द्वारा प्रतिपादित दलित शब्द की परिभाषा को नकारते हुए कहते हैं '' पैंथर्स द्वारा दी गयी वर्गीय परिभाषा के विपरीत आज देश मे दलित शब्द का प्रयोग पूर्व में तथाकथित अस्पृश्य जातियों के लिए किया जा रहा है। वर्तमान समय में समाज विज्ञान के छात्र दलित, अस्पृश्य एवं अनुसूचित जाति शब्दों का प्रयोग एक–दूसरे के पर्याय के रूप में करने लगे हैं।'

कंवल भारती के अनुसार – दलित वह है जिस पर अस्पृश्यता का नियम लागू किया गया है। जिसे कठोर और गंदे कार्य करने के लिए बाध्य किया गया है। जिसे शिक्षा ग्रहण करने और स्वतंत्र व्यवसाय करने से मना किया गया और जिस पर सछूतों ने सामाजिक निर्योग्याताओं की संहिता लागू की वे ही दलित है। मोहनदास नैमिशराय दलित शब्द को और अधिक विस्तार देते हुए कहते हैं– 'दलित शब्द मार्क्स प्रणीत सर्वहारा शब्द के लिए समानार्थी लगता है लेकिन इन दोनों शब्दों में पर्याप्त भेद भी है। दलित की व्याप्ति अधिक है, तो सर्वहारा की सीमित। दलित के अंतर्गत सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक शोषण का अंतर्भाव होता है तो सर्वहारा

केवल आर्थिक शोषण तक ही सीमित है। प्रत्येक दलित व्यक्ति सर्वहारा के अंतर्गत आ सकता है लेकिन प्रत्येक सर्वहारा को दलित कहने के लिए बाध्य नहीं हो सकते। दलित शब्द व्यापक अर्थबोध की अभिव्यंजना देता है। भारतीय समाज में जिसे अस्पृश्य माना गया वह व्यक्ति ही दलित है। इन तथ्यों से स्पष्ट होता है कि दलित शब्द उस व्यक्ति के लिए प्रयोग होता है, जो समाज–व्यवस्था के तहत सबसे निचले पायदान पर है। वर्ण–व्यवस्था ने जिसे अछूत या अंत्यज की श्रेणी में रखा। उसका दलन हुआ, शोषण हुआ। इस समूह को ही संविधान में अनुसूचित जातियां कहा गया है जो जन्मना अछूत है। दलित शब्द साहित्य के साथ जुड़कर एक ऐसी साहित्यिक धारा की ओर संकेत करता है जो मानवीय सरोकारों और संवेदनाओं की यर्थाथवादी अभिव्यक्ति है।

डॉ सी.वी. भारती की मान्यता के अनुसार नवयुग का एक व्यापक वैज्ञानिक व यथार्थपरक, संवेदनशील साहित्यिक हस्तेक्षेप है जो कुछ भी तक्रसंगत, वैज्ञानिक, परंपराओं का पूर्वाग्रहों से मुक्त साहित्य सृजन है। हम उसे दलित साहित्य के नाम से संज्ञायिकत करते है। दलित साहित्य जन साहित्य है, मॉस लिटरेजर। सिर्फ इतना ही नहीं लिटरेजर ऑफ एक्शन भी है जो मानवीय मूल्यों की भूमिका पर सामंती मानसिकता के विरुद्ध आक्रोश जनित संघर्श है। इसी संघर्ष और विद्रोह से दलित साहित्य उत्पन्न हुआ है। राजेंद्र यादव 'दलित' शब्द को व्यापक दृष्टिकोण से देखते हैं जो वे स्त्रियों को भी दलित मानते हैं। पिछड़ी जातियों को भी दलितों में शामिल करते हैं। दलित शब्द से अनेक प्रकार का बोध होता है, जैसे दुःख बोध, अपमान बोध, दैन्य–दासत्त्व बोध, जाति वर्ग बोध, विश्व–बंधुत्व बोध और क्रांति बोध एक अर्थ में आज के सामान्य मनुष्य के जीवन और शूद्र–अपृश्यता के जीवन में दुख, दैन्य, अपमान की व्यथा वेदना भर गई है। युग के बाद युग आये। बड़े–बड़े चक्रवात आये। महाकवि आये। दार्शनिक आये, महापंडित आये। विदेशियों ने आक्रमण किया, राज किया, धर्म आये, संत आये, पंथ आये। फिर भी अपृश्यता, विषमता अमर है। ओमप्रकाश वाल्मीकि के साहित्य में ये सभी रूप हमें देखने को मिलते हैं जो यथार्थ पर आधारित है। दलित का स्वरूप आज भी उसी रूप में है जो सौ साल पूर्व था। प्रोफेसर गंगाधर पतवाने द्वारा निम्न रूप से दलित को परिभाषित करने का प्रयत्न किया गया है – दलित जाति नहीं है, वह न तो प्रतीक है। वह परिवर्तन और क्रांति का प्रतीक है। दलित मानववाद पर विश्वास करते हैं। वे भगवान के अस्तित्व, पूर्वजन्म, आत्मा, धार्मिक पुस्तक के अस्तित्व को नकारते हैं, क्योंकि वे विभाजन और स्वर्ग–नरक का भेद सिखाते हैं। वे अपने देश में सताए हुए लोगों का प्रतिनिधित्व करते है। दलित का अर्थ जाति या निम्न जाति से नहीं है और न ही गरीब, इसका सारतत्व यह है कि राज्य में व्यक्तियों को कई भागों में बांटा जाता है और प्रत्येक भाग का अपना महत्व होता है, प्रत्येक भाग को महत्व प्रदान करने का प्रयत्न किया जा रहा है। दलित शब्द का अर्थ जानने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे है कि किसी भी व्यक्ति विशेष को सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और राजनैतिक के रूप में हो रहे शोषण को लेकर किया जाता है। इसलिए यह कहना अनुचित ही होगा कि भारतीय सिनेमा ने अपने विभिन्न काल खंडों में अपनी फिल्मों के माध्यम से दलित चित्रण करते हुए काल्पनिक पात्रों के माध्यम से समाज में जो घटित हुआ था, घटित हो रहा है उसका यथार्थ रूप से बखूबी चरित्र चित्रण किया गया है और भविष्य में भी किया जाता रहेगा।

विभिन्न विद्वानों के द्वारा विभिन्न परिभाषाओं को उल्लेख करने के बाद शोधार्थी इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि दलित शब्द को किसी जाति विशेष में नहीं बांधना चाहिए बल्कि दलित शब्द के अर्थ को व्यापक अर्थो में प्रयोग करना चाहिए। अतः दलित शब्द का व्यापक अर्थ है –जिसका दलन और दमन हुआ है, दबाया गया है, उत्पीड़ित, शोषित, सताया हुआ, गिराया हुआ, कुचला हुआ, उपेक्षित, घृणित, विनिष्ट, मर्दित, पस्त–हिम्मत, हतोत्साहित है एव हम नारी के पीड़ित रूप को इसमें शामिल करते है, इत्यादि। दलित साहित्य में अनेक पात्र इन तमाम परिस्थितियों का शिकार हुए हैं और सभी पात्रों न इन सभी अत्याचारों को सहन किया, भोगा और उससे बाहर निकलने की कोशिश की है। इसी संदर्भ को आगे बढ़ाते हुए शोधकर्ता ने भारतीय सिनेमा में व्याप्त हो चुके इस दलित चित्रण को अपने शोध के माध्यम से जानने का प्रयास किया है। भारत वर्ष का हर दूसरा या तीसरा व्यक्ति विशेष फिल्मों के माध्यम से फिल्मों में फिलमाये गये काल्पनिक पात्र की छवि को लेकर किसी न किसी रूप में अपने व्यवहार में लाता है और यही व्यवहार दिनोंदिन उनकी रोजमर्रा की जिंदगी में शामिल हो जाता है। शोधकर्ता भी फिल्मों के माध्यम से लोकप्रिय सिनेमा में दलित चित्रण की भूमिका को लेकर आगे बढ़ा है।

निष्कर्ष : सिनेमा व्यक्ति विशेष की अभिव्यक्ति को लेकर आगे बढ़ता है और यही अभिव्यक्ति सिनेमा के माध्यम से संपूर्ण समाज में व्यापक तौर पर पहुंचती है। यह अभिव्यक्ति किसी भी रूप में हो सकती है। हिंदी लोकप्रिय सिनेमा में दलित चित्रण को शोधार्थी ने दलित शब्द को किसी जाति विशेष में ना बांधकर उसे व्यापक अर्थो में साबित किया है। सिनेमा में दिखाये जाने वाले प्रत्येक शोषित कलाकार के भावात्मक, शारीरिक, आर्थिक, सांस्कृतिक रूप को दिखाया गया है। जो यह साबित करता है कि दलित केवल एक जाति विशेष ना होकर एक कलाकार हुनर, कार्यशैली दबाना भी दलित के समान ही समझा जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Fiske John Reading the popular (Boston, MA, Unwin Hyman. 1989
2. भारती, रामविलास, बीसवी सदी में दलित समाज,अनामिका पब्लिकेशन, दिल्ली, पृ.सं 1–2
3. भूषण, मुकेश दलितों का इतिहास, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृ.सं.1–2
4. इरफान इबीब, कास्ट एंड मनी इन इंडियन हिस्ट्री, पृ.सं. 3
5. मेघवाल, कुसुमलता, हिंदी उपन्यासों में दलित वर्ग, पृष्ठ 1
   संधु, जोगिंद्र, दलित चेतना के संदर्भ में ओमप्रकाश वाल्मीकि, साहित्य प्रकाशन, गाजियाबाद, पृष्ठ संख्या 2
6. भारती, कंवल, युद्धरत आदमी, अंक, 44–45, 1998, पृष्ठ 14

7. नैमिशराय, मोहनदास, साहित्य और संस्कृति में दलित अस्मिता और पहचान का सवाल, नया पथ, अंक 24–25, जुलाई 1997,
8. नैमिशराय, मोहनदास, साहित्य और संस्कृति में दलित अस्मिता और पहचान का सवाल, नया पथ, अंक 24–25, जुलाई 1997, 70104
9. संधू, जोगिंद्र, 1912, दलित चेतना के संदर्भ में कथाकार ओमप्रकाश वाल्मीकि, साहित्य संस्थान, पृष्ठ संख्या–12